एच. एस. बरार, के. एस. कुमारन और स्वतंत्र कुमार, जे. जे. के समक्ष

राधा किशन,-याचिकाकर्ता

बनाम

चुनाव ट्रिब्यूनल-कम-सब जज,हिसार और अन्य,-उत्तरदाता

1995 का सी. डब्ल्यू. पी. सं. 17321

22जुलाई, 1999

हरियाणा पंचायती राज अधिनियम, 1994- धारा 176 *(4) (बी)- चुनाव की वैधता को चुनौती देते हुए मतों की पुनः गणना या जांच और गणना की मांग करने का उम्मीदवार का अधिकार- इंगित अधिकार की सीमा- केवल पूछने पर पुनः गणना का आदेश नहीं दिया जा सकता है- दस्तावेजों द्वारा सत्यापित और समर्थित निश्चित कथनों द्वारा समर्थित प्रथम दृष्टया मामले का खुलासा, यदि कोई हो, तो पुनः गणना का आदेश देने के लिए एक पूर्व शर्त है- साक्ष्य के आधार पर एक विस्तृत जांच आवश्यक नहीं है- पक्षों की सहमति से पुनः गणना वैध है और किसी भी कानून या सार्वजनिक नीति को* आहत *नहीं करती है- सहमति देने वाले दलों को पुनः गणना के आदेश की वैधता को चुनौती देने की अनुमति नहीं दी जा सकती है। एस्टोपेल*

यह निर्णय लिया गया कि यह व्याख्या के एक स्थापित सिद्धांत है कि विधायिका द्वारा उपयोग किए गए किसी भी शब्द या भाषा को अनावश्यक या व्यर्थ के रूप में नहीं समझा जाना चाहिए। विधायिका द्वारा विभिन्न शब्दावलियों का प्रयोग किया गया है और जाहिर है कि किसी उद्देश्य से किया गया है। धारा 176 की उप- धारा (1) में प्रयुक्त अभिव्यक्ति "चुनाव की वैधता पर सवाल उठाया गया है" है। उप- धारा 4(ए) में न्यायालय को जांच करनी है और फिर धारा 176(2) के प्रावधानों के अनुसार याचिका पर सुनवाई करते हुए न्यायालय द्वारा दिए गए निर्देशों के अनुसार आदेश पारित करना है। जबकि उप- धारा (4)(बी) में कहा गया है कि "जहां दो या दो से अधिक उम्मीदवारों के बीच चुनाव की वैधता विवाद में हो"। इन अभिव्यक्तियों को समानार्थी या एक- दूसरे के विकल्प के रूप में मानना उचित नहीं होगा।

(पैरा 18 और 19)

इसके अलावा, यह अभिनिर्धारित किया गया कि हरियाणा पंचायती राज अधिनियम, 1994 की धारा 176 की उप-धारा 4 के खंड (बी) में शब्द "शैल" के प्रयोग का हमारे विचार में कोई उद्देश्य नहीं है। उप-धारा (4)(बी) के प्रावधानों के पीछे विधायी उद्देश्य उस उम्मीदवार को त्वरित निपटारा और राहत प्रदान करना है जिसका मामला स्वयं धारा में निर्दिष्ट आधारों के सीमित दायरे में आता है। हमारे लिए ऐसा प्रतीत होता है कि धारा 176(4)(बी) के सीमित दायरे और कार्यक्षेत्र में आने वाले मामले और उप-धारा के उसी उप-खंड (ए) के अंतर्गत नहीं आने वाले मामलों में, न्यायालय के लिए धारा 4(ए) के उप-प्रावधानों के तहत निर्धारित नियमित जांच आयोजित करना आवश्यक नहीं हो सकता है। निर्वाचन की वैधता विवाद में होनी चाहिए लेकिन केवल दो या दो से अधिक उम्मीदवारों के बीच। प्रथम दृष्टया संतुष्ट होने पर, सक्षम अधिकार क्षेत्र के न्यायालय के लिए यह कुछ हद तक अनिवार्य हो सकता है कि इस तरह के आदेश पारित करने पर प्रत्येक उम्मीदवार के पक्ष में दर्ज किए गए मतों की जांच और गणना का आदेश दिया जाए, जिस उम्मीदवार को अपने पक्ष में वैध मतों की सबसे अधिक संख्या दर्ज की गई पाई जाती है, वह विधिवत निर्वाचित होगा। इस श्रेणी में आने वाले मामलों का प्रतिबंधित और संकीर्ण दायरा और इन प्रावधानों का उन पर लागू होना विधायिका द्वारा इन प्रावधानों की भाषा में स्पष्ट रूप से इंगित किया गया है।

(पैरा 24)

इसके अलावा, यह अभिनिर्धारित किया गया कि पार्टियों की सहमति पर आधारित मतों की पुनः गणना या जांच और गणना के लिए पार्टियों की सहमति किसी भी कानून या सार्वजनिक नीति का उल्लंघन नहीं करती है।अधिनियम की धारा 4 (बी) के तहत विचार किए गए आदेश पर न केवल कोई आपत्ति नहीं बताने का रुख अपनाने के साथ-साथ विशिष्ट सहमति देने के बाद, हम महसूस करते हैं कि सहमति देने वाले पक्षों के लिए इस तरह के आदेश की वैधता को चुनौती देना न तो उचित होगा और न ही न्यायपूर्ण होगा ।

(पैरा 28)

इसके अलावा यह अभिनिर्धारित किया गया कि मतों की पुनः गिनती के लिए सहमति देने वाले पक्ष को इस आधार पर उस आदेश की शुद्धता को चुनौती देने से रोक दिया जाएगा कि सहमति आदेश कानून में या अन्यथा अस्वीकार्य है।धारा 4 (बी) के सीमित दायरे को ध्यान में रखते हुए इस तरह के सहमति आदेश की वैधता शायद ही

हमले के लिए खुली होगी और विशेष रूप से जब ऐसा आदेश अन्यथा मामले के गुण-दोष पर न्यायालय द्वारा पारित किया जा सकता है।अन्यथा सक्षम क्षेत्राधिकार के न्यायालय में निहित शक्ति का प्रयोग हमेशा पक्षों की सहमति पर किया जा सकता है, जब तक कि न्यायालय के पास अनुरोध की गई राहत को अस्वीकार करने का कोई वैध कारण न हो।

(पैरा 29)

इसके अलावा यह अभिनिर्धारित किया गया कि जहां विधायी उद्देश्य निर्वाचन अधिकारी द्वारा घोषित परिणाम को अंतिम रूप देना प्रतीत होता है, वहां न्यायालय इस तथ्य को नजरअंदाज नहीं कर सकता है कि विधायिका ने अपने विवेक से हरियाणा अधिनियम के 176 (4) (बी) जैसे प्रावधानों को शामिल किया है। लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम जैसे अन्य कानून में समान प्रावधानों की अनुपस्थिति हरियाणा अधिनियम की धारा 176 (4) (बी) के प्रावधानों के दायित्व के महत्व को दर्शाती है। इसका उद्देश्य निर्वाचन याचिका में अधिनियम की धारा 176 (4) (बी) के तहत आने वाले और भ्रष्ट प्रथाओं से संबंधित मामलों से शीघ्रता से निपटने के लिए न्यायालय को निश्चित शक्ति प्रदान करना और ऐसे आदेश को अंतिमता प्रदान करना है।की धारा 183 हरियाणा अधिनियम जो मतों की गोपनीयता बनाए रखने से संबंधित है और प्रत्येक अधिकारी, अधिकारी, अभिकर्ता या अन्य व्यक्ति पर दायित्व को इंगित करता है जो मतों की रिकॉर्डिंग या गिनती के संबंध में कोई कर्तव्य निभाता है, मतदान की गोपनीयता बनाए रखने में सहायता करेगा और उसे प्राप्त जानकारी को संप्रेषित नहीं करेगा।हरियाणा नियमों की धारा 66 और 69 के साथ पठित धारा 183 के प्रावधान मुख्य रूप से चुनाव प्रक्रिया के लिए गोपनीयता और सम्मान बनाए रखने के लिए हैं।लेकिन विधायिका द्वारा स्वयं न्यायालय को दी गई एक ठोस शक्ति को इन लागू सिद्धांतों द्वारा कम नहीं किया जा सकता है।यदि विधायिका ने धारा 176 (4) (बी) में सन्निहित किसी विशिष्ट प्रावधान को शामिल करने का विकल्प चुना है, तो इसका यह अर्थ लगाया जाना चाहिए कि विधायिका का उद्देश्य अधिनियम की धारा 176 (4) (ए) के तहत प्रतिपादित विस्तृत जांच या साक्ष्य में प्रवेश किए बिना धारा 4 (बी) के तहत आपत्ति पर तेजी से निर्णय लेने के लिए अदालत को व्यापक शक्तियां देना है। इसलिए, अधिनियम की धारा 176 (4) (बी) के प्रावधानों को उदारतापूर्वक लागू करने की आवश्यकता है, हालांकि उस प्रावधान के तहत आने वाले सीमित मामलों के लिए और जैसा *कि* इस *न्यायालय की पूर्ण पीठ* ने अंजू बनाम अतिरिक्त सिविल न्यायाधीश (वरिष्ठ प्रभाग) पेहोवा, 1998 (2) पी. एल. आर. 393 के मामले में अभिनिर्धारित किया है।

(पैरा 39)

इसके अलावा, यह अभिनिर्धारित किया गया कि हरियाणा अधिनियम की धारा 176 (4) (बी) के दायरे और अधिकार क्षेत्र को न्यायालय द्वारा यह अभिनिर्धारित करके नहीं बढ़ाया जा सकता है कि इस सीमित प्रावधान के तहत राहत देने के लिए न्यायालय द्वारा नियमित जांच की जानी है।इस तरह के प्रस्तुतिकरण की स्वीकृति शायद कानून के उद्देश्य को विफल कर देगी।

(पैरा 43)

आगे कहा गया कि इस तरह के चुनाव में मतों की फिर से गिनती को केवल पूछने और नियमित तरीके से निर्देशित नहीं किया जा सकता है।यदि आवेदक, कानून के अनुसार, दस्तावेजों द्वारा समर्थित, यदि कोई हो, स्पष्ट विवरणों द्वारा समर्थित सत्यापन पर निश्चित कथन करता है और जहां *आवेदक न्यायालय* की संतुष्टि के लिए प्रथम दृष्टया मामला बनाता है, तो अधिनियम की धारा 176 (4) (बी) के सीमित दायरे में आने वाले मामले में पुनर्मतगणना पर मतों की जांच और गणना का आदेश देने से न्यायालय को कुछ भी नहीं रोकता है। दूसरे शब्दों में, न्यायालय इस तरह के राहत को इस कारण से अस्वीकार करना उचित नहीं होगा कि आवेदक को, उपरोक्त के बावजूद, विस्तृत जांच के माध्यम से साक्ष्य का नेतृत्व करना चाहिए।इस तरह की विस्तृत जांच न तो पूर्वनिर्धारित है और न ही पूर्व-निर्दिष्ट सीमित मामलों में उक्त प्रावधानों के दायरे में आवश्यक होगी।

(पैरा 50)

आर. एस. सुरजेवाला, *अधिवक्ता, याचिकाकर्ता की ओर से।*

प्रत्यर्थी की ओर से अधिवक्ता ए. के. *रामपाल के साथ अधिवक्ता आर. के. जैन।*

निर्णय

स्वतंतर कुमार, जे।'

(1) इस पूर्ण पीठ का गठन हरियाणा पंचायती राज अधिनियम, 1994 की धारा 176 (4) (बी) की व्याख्या और दायरे पर इस न्यायालय की विभिन्न खंड पीठों द्वारा व्यक्त किए गए दो अलग-अलग विचारों से उत्पन्न विवाद को हल करने के लिए किया गया है, जिसे इसके बाद अधिनियम के रूप में संदर्भित किया गया है। विवाद एक संकीर्ण दिशा के भीतर आता है लेकिन इसमें सार्वजनिक महत्व का सवाल शामिल है।उक्त प्रावधानों में बताए गए आधारों पर चुनाव की वैधता को चुनौती देते हुए मतों की पुनः गिनती या जांच और गणना की मांग करने के उम्मीदवार के अधिकार की सीमा क्या है, इस सटीक प्रश्न का उत्तर दिया जाना चाहिए।दूसरे शब्दों में, इन विधायी प्रावधानों के विच्छेदन पर, क्या उम्मीदवार का ऐसा अधिकार निरपेक्ष है और केवल पूछने या उम्मीदवार के लिए दिया *जाना है,* अदालत से पुनः गिनती का निर्देश देने का अनुरोध करने से पहले कम से कम एक प्रथम दृष्टया मामला बनाने के लिए बाध्य है।

(2) 1995 की सिविल रिट याचिका संख्या 17321 को उनके न्यायालय की एक खंड पीठ द्वारा सुनवाई के लिए *स्वीकार* किया गया था-5 दिसंबर, 1995 के आदेश के माध्यम से।जब मामला विद्वान एकल न्यायाधीश के समक्ष सुनवाई के लिए आया, तो इस न्यायालय की दो अलग-अलग खंड पीठों के फैसलों में विरोधाभास को विद्वान एकल न्यायाधीश ने देखा, जिन्होंने मामले को पूर्ण पीठ को संदर्भित करना उचित समझा।17 जनवरी, 1998 को अदालत ने निम्नलिखित आदेश पारित किया:—

मोजूद—याचिकाकर्ता की ओर से आर. *एस. सुरजेवाला अधिवक्ता।*

एस. एस. खेतरपाल, *अधिवक्ता, प्रतिवादीगण की ओर से।*

याचिकाकर्ता के विद्वान वकील 1995 के सी. डब्ल्यू. पी. संख्या 9671 दिनांक 6 अक्टूबर, 1995 में इस न्यायालय के एक फैसले पर निर्भर करते है।इस न्यायालय की एक अन्य खंड पीठ ने 20 अक्टूबर, 1995 के 1995 के सी. डब्ल्यू. पी. संख्या 6381 में एक अलग दृष्टिकोण अपनाया है।इस प्रकार, हरियाणा पंचायती राज अधिनियम की धारा 176 की उप-धारा (4) के खंड (बी) की व्याख्या के संबंध में एक विरोधाभास है। मेरा मानना है कि इस विवाद को एक बड़ी पीठ द्वारा हल किया जाना चाहिए।इसलिए, मैं कार्यालय को निर्देश देता हूं कि इस मामले को या तो खंड पीठ के समक्ष या पूर्ण पीठ के समक्ष रखने के बारे में उचित आदेश के लिए मामले को मेरे प्रभु मुख्य न्यायाधीश के समक्ष रखा जाए।

(टी. एच. बी. चलपति)

17जनवरी, 1996।न्यायाधीश।

(3) एक अन्य रिट याचिका, 1996 की सिविल रिट याचिका संख्या 14990 को स्वीकार किया गया था और 1995 की सिविल रिट याचिका संख्या 17321 के साथ सुनवाई करने का निर्देश दिया गया था।परिणामस्वरूप, इन दोनों रिट याचिकाओं को पूर्ण पीठ के समक्ष सुनवाई के लिए सूचीबद्ध किया गया है।

(4) प्रारंभ में ही विवाद को विनियमित करने वाले कानून के आवश्यक तथ्यों और प्रासंगिक प्रावधानों का उल्लेख करना उचित होगा।श्री राधा किशन ने वार्ड संख्या 22 से पंचायत समिति, बरवाला का चुनाव लड़ा था और 19 दिसंबर, 1994 को हुए चुनावों में उन्हें सदस्य के रूप में निर्वाचित घोषित किया गया था।21 दिसंबर 1994 को उन्हें अपने निकटतम प्रतिद्वंदी श्री ऋषि सिंह (याचिकाकर्ता संख्या 2) के खिलाफ 671 मत प्राप्त करके निर्वाचित घोषित किया गया, जिन्हें 668 मत प्राप्त हुए।।चुनाव के परिणाम से असंतुष्ट श्री रिसाल सिंह ने 1 जून, 1995 को एक चुनाव याचिका दायर की, जिसमें कहा गया कि ऐसे कई व्यक्ति थे जो सैनिक हैं और कुंभखेड़ा और बोबवा जैसे गाँवों में नहीं थे।वे मतदान की तारीख को गाँवों में नहीं थे, हालाँकि उनके वोट वर्तमान याचिकाकर्ता के समर्थकों द्वारा डाले गए हैं।मतदाताओं की पहचान को भी चुनौती दी गई।उस याचिका में राधा किशन द्वारा अपनाई गई कुछ गलत प्रथाओं का भी उल्लेख किया गया था।यह भी कहा गया कि राधा किशन ग्राम पंचायत की भूमि के अनधिकृत कब्जे में थे और उस भूमि के लिए एक वर्ष से अधिक के पट्टे के भुगतान के लिए बकाया थे और इस तरह वे पंचायत समिति के सदस्य के रूप में घोषित होने के योग्य नहीं थे।पैराग्राफ संख्या 9,14,15 और 16 अन्य प्रासंगिक पैराग्राफ हैं जो वर्तमान याचिका के मुद्दों पर असर डालते हैं और उन्हें सुविधा के उद्देश्य से इसके बाद पुनः प्रस्तुत किया गया है:—

(9)कि चुनाव ड्यूटी पर तैनात अधिकारियों की प्रक्रिया और आचरण में कई अनियमितताएं और अवैधताएं हुई हैं, जिनमें वोट देने से इनकार करना, वोट प्राप्त करना जो अमान्य थे और हरियाणा पंचायती राज अधिनियम और उसके तहत बनाए गए नियमों के प्रावधानों का पालन नहीं करना शामिल है।वे मत जो अमान्य थे और प्रतिवादी संख्या 1 के थे, और जो अमान्य थे, उन्हें अस्वीकार नहीं किया गया और जो मत वैध थे और जिन्हें याचिकाकर्ता के पक्ष में जाना था, उन्हें गलत तरीके से अमान्य घोषित कर दिया गया।ये अनियमितताएँ और अवैधताएँ अपने आप में इस प्रकार की

रही हैं और किसी भी मामले में या उनमें से एक से अधिक को एक साथ लेने से प्रतिवादी संख्या 1 के पक्ष में परिणाम भौतिक रूप से प्रभावित हुआ है।"

(14) .कि मतों की गिनती के बाद, याचिकाकर्ता ने निर्वाचन अधिकारी से मतों की गिनती करने का अनुरोध किया क्योंकि वह कई मतों के विजेता थे और न केवल 3 मतों के, बल्कि निर्वाचन अधिकारी ने याचिकाकर्ता को प्रतिवादी संख्या 1 के खिलाफ तीन मतों के लिए विजेता घोषित किया, लेकिन बाद में सहमति से परिणाम बदल दिया।दुर्भावनापूर्ण इरादे के साथ प्रतिवादी *के साथ।याचिकाकर्ता* को यह भी पता चला है कि प्रतिवादी संख्या 1 ने रु। प्रतिवादी संख्या 1 के पक्ष में इस परिणाम को बदलने के लिए 1 लाख।"

(15) .कि मतों की गिनती के समय निविदा किए गए मतों को ध्यान में नहीं रखा गया था।"

(16) .कि मतपेटियों को खोलने के समय, मतपेटियों को सील करने के समय प्राप्त मुहरों और हस्ताक्षरों को याचिकाकर्ता या उनके एजेंटों द्वारा की गई मांग के बावजूद नहीं दिखाया गया था।शुरू से ही ऐसा प्रतीत होता था कि अधिकारी और अधिकारी याचिकाकर्ता को हराने के लिए प्रतिवादी संख्या 1 के साथ हाथ मिला रहे थे।"

उपरोक्त तथ्यों पर श्री राधा किशन ने अनुरोध किया था कि याचिका को स्वीकार किया जाए और याचिकाकर्ता को श्री रिसाल सिंह के स्थान पर सदस्य पंचायत समिति के पद के लिए निर्वाचित घोषित करने का आदेश दिया जाए और वैकल्पिक रूप से 19 दिसंबर, 1994 को हुए चुनाव को अमान्य घोषित किया जाए और वार्ड संख्या 22 के पुनर्मतदान का आदेश निर्वाचन न्यायाधिकरण द्वारा दिया जाए।

(5)इस चुनाव याचिका पर एक लिखित बयान दायर किया गया था जिसमें विभिन्न प्रारंभिक आपत्तियों को लिया गया था और चुनाव याचिका में याचिकाकर्ता द्वारा किए गए तथ्यात्मक कथनों पर विवाद किया गया था।

(6)12 अगस्त, 1995 के आदेश के अनुसार, हिसार के प्रथम श्रेणी के उप न्यायाधीश ने इस अधिनियम के प्रावधानों के तहत शक्तियों का प्रयोग करते हुए पक्षों की सहमति से मतों की फिर से गिनती करने का आदेश दिया था।आदेश इस प्रकार हैः—

> *"वर्तमानःपक्षों* के लिए वकील।
>
> प्रत्यर्थी ने कहा है कि अगर वोटों की गिनती की जाती है तो उन्हें कोई आपत्ति नहीं है।
>
> इसलिए, मतों की पुनः गिनती के आवेदन का तदनुसार निपटारा किया जाता है।इसलिए, सरकारी वकील श्री महाबीर सिंह को न्यायालय के नामित व्यक्ति के रूप में नियुक्त किया जाता है।उन्हें निर्वाचन अधिकारी, उम्मीदवारों की उपस्थिति में कानून के अनुसार मतों की फिर से गिनती करने का निर्देश दिया जाता है और उनके counsel.It को यहां स्पष्ट किया जाता है कि उम्मीदवार अपने साथ एक प्रतिनिधि ले जाने का हकदार होगा जहां फिर से गिनती की जाएगी।नामांकित व्यक्ति का शुल्क रुपये निर्धारित किया गया है। 1, 000 का भुगतान याचिकाकर्ता/आवेदक द्वारा किया जाना है और याचिका का निपटारा न्यायालय के नामित व्यक्ति की रिपोर्ट के अनुसार किया जाएगा।अन्य आधार माफ कर दिए गए हैं।उपायुक्त, कोषागार अधिकारी को एक पत्र लिखा जाए, निर्वाचन अधिकारी जल्द से जल्द अभिलेख उपलब्ध कराएंगे।16 सितंबर, 1995 को रिपोर्ट की प्रतीक्षा के लिए उपस्थित होना।"

(7) उपरोक्त आदेश को आगे बढ़ाते हुए मतों की फिर से गिनती की गई और 9 नवंबर, 1995 के फैसले के माध्यम से विद्वान न्यायाधीश ने याचिका को स्वीकार कर लिया और श्री राधा किशन के स्थान पर श्री रिसाल सिंह को निर्वाचित घोषित कर दिया।श्री राधा किशन की रिट याचिका में इस आदेश पर आपत्ति जताई गई है।आक्षेपित आदेश का प्रासंगिक भाग इस प्रकार हैः—

> "4. मतों की फिर से गिनती पार्टियों की उपस्थिति में अदालत के नामित व्यक्ति के माध्यम से करने का आदेश दिया गया था।अदालत के नामित व्यक्ति ने दोनों पक्षों और उनके वकील के साथ-साथ निर्वाचन अधिकारी श्री ओम प्रकाश, तहसीलदार, हथिन की उपस्थिति में वोटों की फिर से गिनती करने के बाद अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की है।पुनः गणना की रिपोर्ट के अनुसार याचिकाकर्ता को 667 वोट मिले जबकि प्रतिवादी संख्या 1 को 664 वोट मिले और उचित विचार के बाद चार वोटों को अमान्य घोषित कर दिया गया जैसा कि उम्मीदवार ने बताया था।इसलिए, मतों की फिर से गिनती की रिपोर्ट को देखते हुए यह सामने आता है कि प्रतिवादी संख्या 1 राधा किशन, जिन्हें निर्वाचित घोषित किया गया था, ने 664 मत प्राप्त किए थे, जबकि याचिकाकर्ता ने 667 मत प्राप्त किए थे और इस प्रकार, यह आदेश दिया जाता है कि याचिकाकर्ता को विवादित चुनाव में निर्वाचित उम्मीदवार के रूप में घोषित किया जाना था।इसलिए, याचिकाकर्ता को *19*

दिसंबर, 1994 को आयोजित विवादित चुनाव में निर्वाचित घोषित किया जाता है और जिस आदेश के माध्यम से प्रतिवादी संख्या 1 को निर्वाचित घोषित किया गया था, वह इसके द्वारा निर्धारित किया जाता है।संबंधित अधिकारियों को पंचायत समिति बरवाला वार्ड संख्या 22 के तीन मतों के अंतर से याचिकाकर्ता को निर्वाचित उम्मीदवार घोषित करने के संबंध में उचित अधिसूचना जारी करने का निर्देश दिया जाता है।हालाँकि, याचिका के पक्षों को अपना खर्च वहन करने के लिए छोड़ दिया जाता है।तदनुसार डिक्री शीट तैयार की जाए।फाइल को अभिलेख कक्ष में भेजा जाए।"

(8)श्री राधा किशन द्वारा इस रिट याचिका में दावा की गई राहत का श्री रिसाल सिंह ने रिट याचिका की स्थिरता सहित विभिन्न आधारों पर विरोध किया है।जबकि प्रत्यर्थी ने सुनहरी देवी बनाम नारायण देवी, 1995 की सी. डब्ल्यू. पी. संख्या 6381 के मामले *में इस* न्यायालय *की खंड* पीठ के फैसले पर भरोसा किया, जिसने रिट याचिका को खारिज करने के लिए 20 अक्टूबर, 1995 को फैसला सुनाया, याचिकाकर्ताओं ने भारत सिंह बनाम दलीप सिंह और अन्य के मामले में इस *न्यायालय की* एक *अन्य खंड पीठ के* फैसले पर भरोसा किया, 1995 की सी. डब्ल्यू. पी. संख्या 9671 ने 6 अक्टूबर, 1995 को फैसला सुनाया।विद्वान एकल न्यायाधीश ने पाया कि पूर्व में वर्णित खंड पीठों ने अलग-अलग विचार रखे हैं और इस प्रकार, मामले को एक बड़ी पीठ को भेजने को प्राथमिकता दी।

(9)1996 की सिविल रिट याचिका संख्या 14990 में, श्रीमती. 19 दिसंबर, 1994 को आयोजित ग्राम पंचायत, माधा, तहसील नारनौल के चुनाव के संबंध में दर्शना पराजित उम्मीदवार थीं, जिसका परिणाम 22 दिसंबर, 1994 को घोषित किया गया था।वह श्रीमती से हार गई थी। सुजानी को 489 वोट मिले जबकि श्रीमती. दर्शना को 486 वैध वोट मिले और 45 अमान्य हो गए।

(10)पुनः गणना के लिए एक आवेदन दायर किया गया था जिसका निर्णय उपायुक्त, हिसार द्वारा किया गया था, लेकिन पुनः गणना ने परिणाम को श्रीमती के पक्ष में बनाए रखा। सुजानी हालांकि श्रीमती द्वारा इसका खंडन किया गया था। दर्शना ने कहा कि 19 दिसंबर, 1994 को उन्हें 511 वोट मिले थे जबकि प्रतिवादी नंबर 1 को 509 वैध वोट मिले थे।पुनः गिनती 22 दिसंबर, 1994 को लिखित शिकायत पर उपायुक्त के आदेश पर की गई थी, जब उपरोक्त परिणाम घोषित किया गया था।इस प्रक्रिया से असंतुष्ट होकर श्रीमती. दर्शना ने सिविल जज (जूनियर डिवीजन) हांसी के समक्ष एक चुनाव याचिका दायर की।विद्वान न्यायाधीश ने प्रश्न का उत्तर देते हुए और इस न्यायालय *की* खंड पीठ के निर्णय का पालन करते हुए, 14 अगस्त, 1996 के आदेश के माध्यम से पुनः गिनती के लिए अनुमति दी।आदेश का प्रासंगिक उद्धरण इस प्रकार हैः—

"वर्तमान मामले में याचिकाकर्ता और प्रतिवादी संख्या 1 के बीच मतों का अंतर कम है जिसके लिए पुनः गिनती की आवश्यकता होती है।याचिकाकर्ता ने वर्तमान याचिका को चुनौती देने के लिए अन्य आधार पहले ही छोड़ दिए हैं।इस प्रकार 1996 की खंड पीठ के फैसले पर भरोसा करते हुए, मैं इस आवेदन को फिर से गिनती के लिए अनुमति देता हूं।अदालत में तहसीलदार हांसी की देखरेख में पक्षकारों की उपस्थिति में उनके वकील के साथ गिनती की जाएगी।नियुक्त अधिकारी उन दस्तावेजों को ले सकता है जो पुनर्मतगणना के लिए सहायक हैं और चुनाव रिकॉर्ड भी तलब कर सकते हैं।वह 19 अक्टूबर, 1996 को या उससे पहले शुष्क समय निर्धारित करने के बाद पक्षों को नोटिस जारी कर सकता है।तहसीलदार प्रत्येक उम्मीदवार द्वारा प्राप्त मत की पुनः गिनती और उल्लेख करने के बाद अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत करेगा।हालांकि, यह स्पष्ट कर दिया गया है कि वह परिणाम घोषित नहीं करेंगे और मतदान रद्द कर दिया गया।वह केवल अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत करेंगे।उनकी फीस रुपये तय की गई है। 500 जो आवेदक द्वारा भुगतान किया जाएगा।"

नतीजतन, अनुलग्नक पी-1 और पी-2 को रद्द करने का अनुरोध करते हुए रिट याचिका दायर की गई थी।

(11)1996 के सी. डब्ल्यू. पी. सं. 14990 में, इस प्रकार, चुनौती, मूल रूप से 14 अगस्त, 1996 के उस आदेश के लिए है जिसके द्वारा विद्वान सिविल न्यायाधीश (कनिष्ठ प्रभाग), हांसी ने आदेश में बताए गए कारणों के लिए मतों की फिर से गिनती का निर्देश दिया था।जबकि 1995 के सी. डब्ल्यू. पी. सं. 17321 में उप-राज्यपाल द्वारा पारित 9 नवंबर, 1995 के निर्णय को चुनौती दी गई है।

न्यायाधीश प्रथम श्रेणी, हिसार, जहां पुनर्मूल्यांकन पर रिपोर्ट के आधार पर-14 अगस्त, 1996 *के आदेश* के अनुसार उसमें प्रत्यर्थी का चुनाव रद्द कर दिया गया था।इस प्रकार, रिसाल सिंह का मामला एक बड़े क्षेत्र में फैला हुआ है।

(12) हरियाणा पंचायती राज अधिनियम, 1994 की धारा 176 के प्रावधानों के लिए, शुरू में ही, मुद्दे के संदर्भ में नियंत्रण को नियंत्रित करने वाले उपबंध किए जाने चाहिए।उक्त खंड निम्नानुसार हैः—

“176. (1) न्यायाधीश और प्रक्रिया द्वारा चुनाव जांच की वैधता का निर्धारण।यदि किसी ग्राम पंचायत, पंचायत समिति या जिला परिषद के सदस्य या उप-सरपंच, ग्राम पंचायत के सरपंच, अध्यक्ष या उपाध्यक्ष, पंचायत समिति या जिला परिषद के अध्यक्ष या उपाध्यक्ष के किसी भी चुनाव की वैधता पर चुनाव लड़ने वाले किसी भी व्यक्ति द्वारा या उस चुनाव में मतदान करने के लिए योग्य किसी व्यक्ति द्वारा सवाल उठाया जाता है, जिससे ऐसा प्रश्न संबंधित है, तो ऐसा व्यक्ति चुनाव के परिणाम की घोषणा की तारीख के तीस दिनों के भीतर किसी भी समय उस क्षेत्र में सामान्य अधिकार क्षेत्र वाले सिविल कोर्ट में एक चुनाव याचिका प्रस्तुत कर सकता है, जिसमें ऐसे प्रश्न के निर्धारण के लिए चुनाव हुआ है या होना चाहिए था।

(2)एक याचिकाकर्ता निम्नलिखित व्यक्तियों को छोड़कर अपनी चुनाव याचिका में प्रतिवादी के रूप में शामिल नहीं होगाः—

(a) जहां याचिकाकर्ता सभी या किसी भी लौटने वाले उम्मीदवार के चुनाव की वैधता को चुनौती देने के अलावा यह दावा करता है कि वह स्वयं या किसी अन्य उम्मीदवार को विधिवत चुना गया है, याचिकाकर्ता के अलावा सभी चुनाव लड़ने वाले उम्मीदवार और जहां ऐसी कोई और राहत का दावा नहीं किया जाता है, सभी लौटने वाले उम्मीदवार;

(b) कोई अन्य उम्मीदवार जिसके खिलाफ चुनाव याचिका में किसी भी भ्रष्ट आचरण के आरोप लगाए गए हैं।

(3)उप-धारा (1) के तहत प्राप्त सभी चुनाव याचिकाओं, जिनमें एक ही निर्वाचन प्रभाग का प्रतिनिधित्व करने के लिए सदस्यों के चुनाव की वैधता प्रश्नगत है, की सुनवाई उसी दीवानी न्यायालय द्वारा की जाएगी।

(4) (ई (ए) यदि ऐसी जांच के आधार पर सिविल 2 कोर्ट को पता चलता है कि किसी उम्मीदवार ने चुनाव के उद्देश्य से उप-धारा (5) के अर्थ के भीतर एक भ्रष्ट प्रथा को अंजाम दिया है, तो वह चुनाव को दरकिनार कर देगा और उम्मीदवार की घोषणा करेगा।

चुनाव और नए सिरे से चुनाव के उद्देश्य से अयोग्य घोषित किया जा सकता है।

(5) यदि किसी मामले में जिसमें खंड (क) लागू नहीं होता है, दो या दो से अधिक उम्मीदवारों के बीच चुनाव की वैधता पर विवाद है, तो अदालत प्रत्येक उम्मीदवार के पक्ष में दर्ज मतों की जांच और गणना के बाद, उस उम्मीदवार को विधिवत निर्वाचित घोषित करेगी, जिसके पक्ष में सबसे अधिक वैध मत पाए गए हैंः

बशर्ते कि ऐसी गणना के बाद, यदि कोई हो, तो किसी भी उम्मीदवार के बीच मतों की समानता पाई जाती है और एक मत जोड़ने से कोई भी उम्मीदवार निर्वाचित घोषित होने का हकदार हो जाएगा, ऐसे उम्मीदवार या उम्मीदवारों के पक्ष में प्राप्त वैध मतों की कुल संख्या में एक अतिरिक्त मत जोड़ा जाएगा, जो न्यायाधीश की उपस्थिति में उस तरीके से चुना जाता है जो वह निर्धारित करे।

(5) पीपर्सन3शॉल को] प्रतिबद्ध माना जाएगाएक भ्रष्ट प्रथा -

(a) जो किसी मतदाता को किसी उम्मीदवार के पक्ष में वोट देने या देने से रोकने के लिए प्रेरित करने की दृष्टि से, कोई धन या मूल्यवान प्रतिफल प्रदान करता है या देता है, या व्यक्तिगत लाभ का कोई वादा करता है, या किसी व्यक्ति को नुकसान पहुंचाने का कोई खतरा रखता है; या

(b) जो किसी व्यक्ति को खड़े होने या न होने या पीछे हटने या चुनाव में उम्मीदवार होने से पीछे हटने के लिए प्रेरित करने की दृष्टि से, कोई धन या मूल्यवान प्रतिफल प्रदान करता है या देता है या कोई वादा या व्यक्तिगत लाभ रखता है या किसी व्यक्ति को चोट पहुँचाने का कोई खतरा रखता है; या

(c) जो किसी भी मतदाता (व्यक्ति स्वयं, उसके परिवार के सदस्यों या उसके एजेंट के अलावा) को किसी पोलिंग स्टेशन तक पहुँचाने के लिए भुगतान पर या अन्यथा कोई वाहन या पोत किराए पर लेता है या खरीदता है।’

स्पष्टीकरण 1.—एक भ्रष्ट अभ्यास एक उम्मीदवार द्वारा किया गया माना जाएगा, अगर यह एक ऐसे व्यक्ति द्वारा अपने ज्ञान और सहमति से किया गया है जो चुनाव के संदर्भ में ऐसे उम्मीदवार के सामान्य या विशेष प्राधिकरण के तहत काम कर रहा है।

स्पष्टीकरण 2.—"वाहन" पद का अर्थ है सड़क के उद्देश्य के लिए उपयोग किया जाने वाला या उपयोग

करने में सक्षम कोई भी वाहन।

परिवहन चाहे वह यांत्रिक शक्ति से संचालित हो या अन्यथा और चाहे वह ड्राइंग, अन्य वाहनों या अन्यथा के लिए उपयोग किया जाता है।"

(13) अधिनियम की धारा 209 सरकार को इस अधिनियम के उद्देश्यों को पूरा करने के लिए नियम बनाने का अधिकार देती है। धारा 2209 की उप-धारा (2) 0 का खंड (आर):—

"209. सरकार को नियम बनाने की शक्ति।

(1) सरकार, आधिकारिक राजपत्र में अधिसूचना द्वारा, इस अधिनियम के उद्देश्यों को पूरा करने के लिए नियम बना सकती है।

(2) विशेष रूप से और पूर्वगामी शक्ति की व्यापकता के प्रति पूर्वाग्रह के बिना, ऐसे नियम बनाए जा सकते हैं।

XX XX XX

(1) चुनाव से जुड़े सभी मामलों के लिए;

(14) एक अन्य प्रासंगिक प्रावधान जिसे तर्क के विभिन्न चरणों में पक्षों के लिए विद्वान वकील द्वारा संदर्भित किया गया है, अधिनियम की धारा 183 है जो निम्नानुसार हैः—

"183. मतदान की गोपनीयता बनाए रखना।

(1) जहाँ चुनाव आयोजित किया जाता है, वहाँ प्रत्येक अधिकारी, अधिकारी, अभिकर्ता या अन्य व्यक्ति जो मतों की रिकॉर्डिंग या गिनती के संबंध में कोई कर्तव्य निभाता है, मतदान की गोपनीयता बनाए रखने में सहायता करेगा और (किसी कानून द्वारा या उसके तहत अधिकृत किसी उद्देश्य को छोड़कर) किसी भी व्यक्ति को ऐसी गोपनीयता का उल्लंघन करने के लिए कोई भी जानकारी नहीं देगा।

(2) कोई भी व्यक्ति जो उप-धारा (1) के प्रावधानों का उल्लंघन करता है, दोषी ठहराए जाने पर, तीन महीने तक की अवधि के कारावास या पाँच सौ रुपये के जुर्माने या दोनों से दंडित किया जाएगा।"

(15) धारा 176 का एक सादा पढ़ने से पता चलता है कि यह अपने आप में एक पूर्ण संहिता है और विभिन्न उप-धाराओं के तहत निर्दिष्ट आधारों पर चुनाव की वैधता पर सवाल उठाए जाने से संबंधित है।

(16) धारा 176 की उप-धारा (1) एक चुनाव लड़ने वाले उम्मीदवार या किसी भी व्यक्ति को, जो चुनाव में मतदान करने के लिए योग्य है, ग्राम पंचायत, पंचायत समिति या जिला परिषद आदि के सदस्य के किसी भी चुनाव की वैधता को सक्षम अधिकार क्षेत्र के न्यायालय के समक्ष प्रश्न लाने का अधिकार देती है। न्यायालय के समक्ष इस प्रकार दायर याचिका पर किए गए अभिकथनों और आरोपों की प्रकृति के आधार पर धारा 176 की उप-धारा (4) के प्रावधानों के अनुसार संबंधित न्यायालय द्वारा निर्णय लिया जाना है।न्यायालय से अपेक्षा की जाती है कि वह उप-धारा (4) (ए) के तहत जांच करे और जहां उसे पता चलता है कि उम्मीदवार ने अधिनियम की धारा 176 की उप-धारा (5) के अर्थ के भीतर परिभाषित भ्रष्ट आचरण किए हैं। परिणाम यह हो सकता है कि न्यायालय चुनाव को रद्द कर देगा और उम्मीदवार को चुनाव के उद्देश्यों के लिए अयोग्य घोषित कर देगा और नए चुनाव कराए जा सकते हैं, जबकि धारा 176 की उप-धारा (4) के खंड (बी) के तहत अलग-अलग तत्व और परिणाम हैं।उप-धारा के दायरे और संयोजन के संबंध में निम्नलिखित चार बुनियादी तत्व निर्विवाद रूप से उभरते हैं, जो क़ानून की भाषा से ही स्पष्ट होते हैंः—

(i) किसी भी मामले में जिस पर खंड *(ए) लागू नहीं होता है;*

(ii) एक चुनाव की वैधता दो या दो *से अधिक उम्मीदवारों के बीच विवाद में है।*

(iii) न्यायालय, प्रत्येक *उम्मीदवार के पक्ष में दर्ज मतों की* जांच और गणना के बाद;

(iv) उस उम्मीदवार को विधिवत निर्वाचित घोषित करें जिसके *पक्ष में सबसे अधिक वैध वोट* पाए गए हैं।

(17) (i) और (ii) का अस्तित्व (iii) न्यायालय *द्वारा आवेदन* करने और/या उपरोक्त (iv) के तहत आदेश

पारित करने के लिए एक अनिवार्य शर्त है।उप-धारा (4) के खंड (ए) के तहत आने वाले मामलों का अपवर्जन स्पष्ट रूप से सीमित प्रकृति के मामलों और पूरी तरह से उप-धारा (4) के खंड (बी) के तहत आने वाले मामलों को शीघ्र उपचार प्रदान करने के विधायी इरादे को इंगित करता है।कानून बनाने में विधायिका द्वारा अपनाई गई भाषा हमेशा कानून की व्याख्या में बड़ी सहायता का सिद्धांत रही है।कानून की भाषा का अर्थ इसके सरल पठन पर किया जाना चाहिए और प्रावधान के शब्दों को जोड़े या घटाए बिना इसका सामान्य रूप से समझा जाने वाला अर्थ दिया जाना चाहिए।

(18) यह कानूनों की व्याख्या का एक निश्चित सिद्धांत है कि विधायिका द्वारा उपयोग किए जाने वाले किसी भी शब्द या भाषा को अनावश्यक या व्यर्थ नहीं समझा जाना चाहिए।ऐसा प्रतीत होता है कि विधानमंडल द्वारा विभिन्न शब्दावली का उपयोग किया गया है और स्पष्ट रूप से किसी उद्देश्य के लिए किया गया है।धारा 176 की उप-धारा (1) में इस्तेमाल की गई अभिव्यक्ति है "चुनाव की वैधता पर सवाल उठाया जाता है।" उप-धारा (4) (ए) में न्यायालय को एक जांच करनी होती है और फिर आदेश पारित करना होता है जैसा कि मनोरंजन पर अभिनिर्धारित किया गया है।

अधिनियम की धारा 176 (2) के प्रावधानों के अनुसार एक याचिका। जबकि उप-धारा (4) (बी) के तहत यह कहा गया है कि "जहां दो या दो से अधिक उम्मीदवारों के बीच चुनाव की वैधता पर विवाद है।"

(19) इन अभिव्यक्तियों को एक-दूसरे का पर्याय या एक-दूसरे का विकल्प मानना उचित नहीं होगा।न्यायालय को इस धारा के विभिन्न प्रावधानों को विभिन्न प्रकार के मामलों में और उपयुक्त चरणों में विवेकपूर्ण रूप से लागू करने में सक्षम होना चाहिए।श्रीमती के मामले में इस न्यायालय की एक पूर्ण पीठ। अंजू बनाम अपर सिविल *न्यायाधीश (वरिष्ठ* प्रभाग), *पेहोवा (1) ने अधिनियम की धारा 176* (4) (ए) और (बी) के दायरे और प्रयोज्यता में अंतर पर विचार किया। पूर्ण पीठ ने निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया:—

> "उपरोक्त प्रावधान के अवलोकन से पता चलेगा कि केवल दो आधार हैं जिन पर चुनाव को चुनौती दी जा सकती है:(क) कि वापस लौटे उम्मीदवार ने उप-धारा (5) के अर्थ के भीतर एक भ्रष्ट आचरण किया; (ख) कि गिनती के दौरान कुछ अनियमितताएं या अवैधताएं की गईं, जिस याचिका पर अदालत वोटों की जांच और फिर से गिनती का आदेश दे सकती है और उस उम्मीदवार को विधिवत निर्वाचित घोषित कर सकती है जिसके पक्ष में सबसे अधिक वैध वोट पाए गए हैं।धारा 176 की उप-धारा (5) तब परिभाषित करती है कि भ्रष्ट आचरण का क्या अर्थ है और कब किसी व्यक्ति को ऐसा करने वाला माना जाएगा।प्रतीकों के प्रभार के संबंध में आधार धारा 176 (4) में उल्लिखित आधार नहीं है जिस पर एक लौटे उम्मीदवार के चुनाव को चुनौती दी जा सकती है।"

(20) विचार के लिए जो स्पष्ट सहायक प्रश्न उत्पन्न होगा वह यह है कि क्या वे याचिकाकर्ता जो उप-धारा (4) (ए) और (बी) के तहत निर्दिष्ट आधारों के अलावा अन्य आधारों पर चुनाव की वैधता को चुनौती दे रहे हैं, या इसकी शुद्धता पर सवाल उठा रहे हैं, उनके पास कानून में कोई उपाय नहीं है।उपरोक्त सहायक प्रश्न पर लाई चंद *बनाम हरियाणा* राज्य *(2) के मामले* में इस न्यायालय की एक अन्य पूर्ण पीठ द्वारा विचार किया गया था, जहां न्यायालय ने श्रीमती. अंजू का मामला (ऊपर) और सवाल का विस्तार से जवाब दिया:—

> "संक्षेप में, पूर्ण पीठ को भेजे गए प्रश्नों का हमारा उत्तर इस प्रकार है:
>
> 1. संविधान के अनुच्छेद 243-0 के खंड (ए) और अनुच्छेद 243-जेडजी के खंड (ए) के संबंध में प्रश्न का उत्तर प्रधान संघ क्षेत्र समिति (उपरोक्त) के मामले में उच्चतम न्यायालय के निर्णय में दिया गया है।

(1) 1998 (2) पी. एल. आर. 393
(2) 1998 (2) पी. एल. आर. 640

2. संविधान के अनुच्छेद 243-0 के खंड (बी) और अनुच्छेद 243-ZG के खंड (बी) के संबंध में, हमारा मानना है कि उपरोक्त दो अनुच्छेदों में दिखाई देने वाले "इस संविधान में कुछ भी होने के बावजूद" शब्दों को संविधान के अनुच्छेद 226/227 के अधीन "इस संविधान में कुछ भी होने के बावजूद" के रूप में पढ़ा जाएगा।तदनुसार, अनुच्छेद 243-0 के खंड (बी) और अनुच्छेद 243-जेडजी के खंड (बी) का अर्थ निम्नानुसार पढ़ा जाएगाः

"किसी भी पंचायत/नगर पालिका के चुनाव पर सवाल नहीं उठाया जाएगा, सिवाय उस चुनाव याचिका के जो ऐसे प्राधिकरण को प्रस्तुत की गई हो और उस तरीके से जो किसी राज्य के विधानमंडल द्वारा बनाए गए किसी कानून द्वारा या उसमें प्रदान की गई हो, लेकिन यह संविधान के अनुच्छेद 226/227 के तहत उच्च न्यायालय की अधिकारिता को समाप्त नहीं करेगा।

3. ग्राम पंचायत/जिला परिषद में लौटे उम्मीदवार के चुनाव को हरियाणा अधिनियम और हरियाणा नियमों के तहत किस आधार पर चुनौती दी जा सकती है, इससे संबंधित दूसरे प्रश्न का उत्तर पहले से ही श्रीमती के मामले में इस अदालत के पूर्ण पीठ *के फैसले* में *दिया गया है। अतिजू बनाम अतिरिक्त।सिविल* जज (सीनियर डिवीजन), पेहोवा, (1998-2) 119 पी. एल. आर. 393 (एफ. बी.)।"

(21) हमने इस न्यायालय के उपरोक्त पूर्ण पीठ के निर्णय का उल्लेख किया है, जिसका उद्देश्य वर्तमान मामले में शामिल प्रश्नों का स्पष्ट और स्पष्ट शब्दों में उत्तर प्रदान करना है।इस प्रकार, हम श्रीमतीमंजू *और लाई चंद (ऊपर)* के मामलों में इस न्यायालय की पूर्ण पीठ द्वारा लिए गए दृष्टिकोण का सम्मान के साथ पालन करेंगे।

(22) याचिकाकर्ता की ओर से पेश विद्वान वकील ने तर्क दिया कि धारा 176 (4) (बी) के प्रावधानों को ध्यान में रखते हुए 'अभिव्यक्ति' का अर्थ 'हो सकता है' के रूप में लगाना होगा।यह भी तर्क दिया गया कि अधिनियम की धारा 183 और हरियाणा पंचायती राज चुनाव नियम, 1994 के नियम 39 से 45,48 से 51,55 से 57,62 से 69 और 72 से 74 के प्रावधानों को ध्यान में रखते हुए, विधानमंडल का उद्देश्य मतों की गोपनीयता का दायरा बनाए रखना है।इस प्रकार, मामलों में पारित पुनः गिनती के आदेश कानूनी रूप से अस्थिर हैं क्योंकि कोई सबूत नहीं था और निचली अदालत के समक्ष रिकॉर्ड के आधार पर ऐसी राय बनाना संभव नहीं था।अपने तर्क के लिए समर्थन प्राप्त करने के लिए उन्होंने भरत सिंह बनाम दलीप सिंह और अन्य (3) के मामले में इस अदालत की *खंडपीठ के* फैसले *पर दृढ़ता से भरोसा* किया।

(23) दूसरी ओर, उत्तरदाता (विवादित आदेशों के लाभार्थी) ने तर्क दिया कि विधानमंडल ने जानबूझकर अधिनियम की धारा 176 की उप-धारा (4) के खंड (ए) और (बी) के तहत आने वाले मामलों को वर्गीकृत किया है। खंड (ख) में 'होगा' पद का उपयोग न्यायालय के लिए यह अनिवार्य बनाता है कि जब भी उम्मीदवार मांग करे, मतों की जांच और गणना के आधार पर पुनः गिनती का निर्देश दिया जाए।विद्वान वकील ने सुनेहरी देवी (उपरोक्त) के मामले में इस न्यायालय की एक अन्य खंड पीठ द्वारा लिए गए स्पष्ट निष्कर्षों से समर्थन प्राप्त किया, जहां यह निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया गया थाः—

"न्यायालय आम तौर पर अधिनियम की भाषा को बदलकर विधानमंडल की भूमिका को हड़प नहीं सकता है।इन दो सिद्धांतों के अतिरिक्त, जो हमारी राय में धारा 176 की व्याख्या पर लागू होते हैं, हम इस तथ्य को नजरअंदाज करने का कोई कारण या औचित्य नहीं पाते हैं कि विधानमंडल ने धारा 176 (4) (बी) में "शब्द का उपयोग किया है।"होगा" शब्द का उपयोग इस धारणा को जन्म देता है कि धारा 176 (4) (बी) अनिवार्य है।

क़ानूनों के निर्माण पर क्रॉफर्ड ने कहा हैः"आम तौर पर "विल" और "मस्ट" शब्द अनिवार्य होते हैं और "मे" शब्द निर्देशिका होता है, हालांकि उनका उपयोग अक्सर कानून में एक दूसरे के स्थान पर किया जाता है।" क्रॉफर्ड द्वारा आगे यह देखा गया है कि निर्देशिका और निर्देशिका शब्दों के रूप में अनिवार्य शब्दों के निर्माण को अनिवार्य रूप से पारस्परिक रूप से नहीं अपनाया जाना चाहिए क्योंकि इस बात का काफी खतरा है कि विधायी इरादे पूरी तरह या आंशिक रूप से विफल हो जाएंगे।

यदि हम विधायी इरादे के आलोक में "होगा" शब्द के उपयोग पर विचार करते हैं, तो इसमें कोई संदेह नहीं हो सकता है कि विधानमंडल ने अदालत के लिए प्रत्येक उम्मीदवार द्वारा डाले गए मतों की जांच और गिनती को अनिवार्य बना दिया है और उस उम्मीदवार को निर्वाचित घोषित किया है जिसने सबसे अधिक वैध मत प्राप्त किए हैं।यदि "होगा" शब्द को "मई" के रूप में पढ़ा जाना था या प्रावधान को निर्देशिका माना गया था, तो धारा 176 (4) (बी) में निहित प्रावधान स्वयं मनमानेपन के अधीन हो जाएगा और न्यायालय को एक मामले में मतपत्रों की जांच और गिनती करने और दूसरे मामले में ऐसा न करने के लिए बेलगाम विवेकाधिकार प्रदान करेगा।इस तरह की व्याख्या क़ानून की सरल भाषा से आवश्यक है और किसी भी मामले में इससे बचा जाना चाहिए।

उपरोक्त को ध्यान में रखते हुए, यह अभिनिर्धारित किया जाता है कि विद्वान वरिष्ठ उप न्यायाधीश द्वारा पारित आदेश किसी भी अवैधता से ग्रस्त नहीं है जो हमारे हस्तक्षेप की गारंटी देता है।

ऊपर बताए गए कारणों से रिट याचिका खारिज कर दी जाती है।"

(24) "हमारे विचार में "शैल" शब्द का प्रयोग बिना उद्देश्य के नहीं है। उप-धारा (4)(बी) के प्रावधानों के पीछे विधायी उद्देश्य उस उम्मीदवार को शीघ्र निपटारा और राहत प्रदान करना है जिसका मामला स्वयं धारा में निर्दिष्ट आधारों के सीमित दायरे में आता है। हमें ऐसा प्रतीत होता है कि धारा 176(4)(बी) के सीमित दायरे और कार्यक्षेत्र में आने वाले मामले और उप-धारा के उसी उप-खंड (ए) के अंतर्गत नहीं आने वाले मामलों में, न्यायालय के लिए धारा 4(ए) के उप-प्रावधानों के तहत निर्धारित नियमित जांच आयोजित करना आवश्यक नहीं हो सकता है। निर्वाचन की वैधता विवाद में होनी चाहिए लेकिन केवल दो या दो से अधिक उम्मीदवारों के बीच। प्रथम दृष्टया संतुष्ट होने पर, सक्षम अधिकार क्षेत्र के न्यायालय के लिए यह कुछ हद तक अनिवार्य हो सकता है कि इस तरह के आदेश पारित करने पर प्रत्येक उम्मीदवार के पक्ष में दर्ज किए गए मतों की जांच और गणना का आदेश दिया जाए, जिस उम्मीदवार को अपने पक्ष में वैध मतों की सबसे अधिक संख्या दर्ज की गई पाई जाती है, वह विधिवत निर्वाचित होगा। इस श्रेणी में आने वाले मामलों का प्रतिबंधित और संकीर्ण दायरा और उन पर इन प्रावधानों का लागू होना विधायिका द्वारा इन प्रावधानों की भाषा में स्पष्ट रूप से इंगित किया गया है।"

(25) उप-धारा (4) (बी) के प्रावधानों के प्रारंभिक शब्द धारा 4 (ए) के तहत आने वाले मामलों के बहिष्करण को इंगित करते हैं और वोटों की गणना और जांच के लिए बहुत सीमित और एकमात्र आधार के मामलों को इसके दायरे में लेते हैं।यदि उचित आदेश पारित किए जाने से पहले दायित्व आधारित साक्ष्य, गवाहों की संख्या की जांच और फिर लंबी दलीलों की सुनवाई के साथ अभिवचन दायर करके जांच करने की पूरी प्रक्रिया अपनाई जाती है, तो यह इस उप-धारा के उद्देश्य को ही विफल कर देगा।चुनावी मामलों का शीघ्र निपटान करना ताकि एक सफल उम्मीदवार क़ानून के संदर्भ में अपने पूरे कार्यकाल का उपयोग कर सके, ऐसे प्रावधानों के पीछे मूल विधायी उद्देश्य होगा।इस तरह की चुनाव याचिकाओं के निपटारे में अनावश्यक बाधाओं से बचने के लिए केवल यही उद्देश्य अभिव्यक्ति 'होगा' और जहां 'हो सकता है' के बीच अंतर की रेखा के कारण को स्पष्ट रूप से समझा जाना चाहिए।यह भी तर्क नहीं दिया

जा सकता था कि केवल एक आवेदन की प्रस्तुति न्यायालय को एक उम्मीदवार या दूसरे के पक्ष में डाले गए मतों की गणना और जांच के आधार पर स्वचालित रूप से फिर से गिनती का आदेश पारित करने के लिए मजबूर करेगी।

(26) न्यायालय की न्यायिक घोषणाओं या निर्णयों का सार, उनके समर्थन में कारण हैं।कारण निर्णय की आत्मा हैं।कारणों को अभिलेख की सामग्री पर आधारित किया जाना चाहिए।न्यायसंगतता और विवेक के प्रयोग का सिद्धांत प्रशासनिक आदेशों की तुलना में न्यायिक घोषणाओं पर अधिक सख्ती से लागू होता है।कानून का मूल नियम अदालतों से रिकॉर्ड के आधार पर और कुछ प्रशंसनीय तर्क पर आधारित आदेश पारित करने की मांग करता है।इसे संतुष्ट करने के लिए किसी मामले को अधिनियम की उप-धारा (4) (बी) के दायरे और दायरे में लाने के लिए न्यायालय के समक्ष कुछ सामग्री की दोहरी अवधारणा प्रस्तुति आवश्यक होगी।याचिका को आदेश में स्वचालित रूप से परिवर्तित करने की अवधारणा कानून के मूल शासन के लिए विनाशकारी होगी।

(27) दूसरे शब्दों में, एक आवेदन दायर करने वाले पक्ष और जिस पक्ष को इस तरह के आवेदन का बचाव करने के लिए बुलाया जाता है, उसे राहत की सटीक सीमा का पता होना चाहिए, और जिस मामले को पूरा करना है, उसे स्पष्ट रूप से अनुरोध किया जाना चाहिए।स्थिति पूरी तरह से अलग होगी जहां एक दल ने मतों की फिर से गिनती के लिए सहमति दी है और मतों की इस तरह की फिर से गिनती पर उप-धारा (4) (बी) के प्रावधानों के अनुरूप एक आदेश पारित किया गया है।अदालत के लिए इस तरह के फैसले को उलटना मुश्किल होगा।सबसे पहले एक गैर-आवेदक को सहमति देने का अधिकार है और एक बार ऐसी सहमति दिए जाने और उस पर कार्रवाई किए जाने के बाद, ऐसे गैर-आवेदक को ऐसे आदेश की शुद्धता को चुनौती देने से रोक दिया जाएगा।उसके आचरण के विपरीत रुख अपनाने से वह कानून के दायरे से बाहर हो जाएगा।राधा किशन याचिकाकर्ता के मामले में, 12 मई, 1995 को प्रतिवादी ने विशेष रूप से कहा था कि अगर वोटों की गिनती की जाती है तो उसे कोई आपत्ति नहीं है।यह उन गिनती का परिणाम है जो न्यायालय द्वारा दर्ज की गई थी।

(28) पार्टियों की सहमति पर आधारित वोटों की फिर से गिनती या जांच और गणना के लिए पार्टियों की सहमति किसी भी कानून या सार्वजनिक नीति को आहत नहीं करती है।अधिनियम की धारा 4 (बी) के तहत विचार किए गए आदेश पर न केवल कोई आपत्ति नहीं बताने का रुख अपनाने के साथ-साथ विशिष्ट सहमति देने के बाद, हम महसूस करते हैं कि सहमति देने वाले पक्षों के लिए इस तरह के आदेश की वैधता को चुनौती देना न तो उचित होगा और न ही उचित होगा।पक्षकार सक्षम अधिकारिता वाले न्यायालय के समक्ष अपने आचरण द्वारा शासित होते हैं।आम तौर पर पक्षों को दूसरे के नुकसान और पूर्वाग्रह के लिए अपने आचरण को बदलने की अनुमति नहीं होगी और विशेष रूप से वर्तमान प्रकार के मामलों में।सुखचंद राज सिंह के मामले में भारत सिंह (उपरोक्त) के मामले में भारत के माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा प्रतिपादित सिद्धांतों का पालन करते हुए इस न्यायालय की एक खंड पीठ ने निम्नानुसार अभिनिर्धारित कियाः—

> "याचिकाकर्ता के वकील ने तर्क दिया कि कोई पुनः गिनती नहीं हो सकती है।पक्षों के बयान के आधार पर अनुमति दी जाए।यह तर्क दिया गया था कि जहां चुनाव याचिका कार्रवाई के किसी भी कारण का खुलासा नहीं करती है या जहां फिर से गिनती के लिए चुनाव याचिका में लगाए गए आरोपों का समर्थन करने के लिए कोई सबूत नहीं है, वहां फिर से गिनती का आदेश दिया जा सकता है क्योंकि लौटे उम्मीदवार द्वारा दिया गया कोई भी बयान, फिर से गिनती के लिए सहमत होना, कानून के खिलाफ होगा और इसलिए, उस पर कार्रवाई नहीं की जा सकती है।इसके विपरीत प्रतिवादीगण की ओर से पेश वकील द्वारा लिया गया रुख हैः
>
> कि पुनः गिनती के संबंध में समझौता एक वैध समझौता है और पक्षों के बीच बाध्यकारी है।
>
> क्या सुखचंद राज सिंह बनाम राम हर्ष मिश्रा और अन्य ए. आई. आर. 1977 एस. सी. 681 मामले में भारत के सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष विचार *के लिए पक्षकारों के बीच एक समझौते के आधार* पर फिर से गिनती का आदेश दिया जा सकता है, भारत के सर्वोच्च न्यायालय ने पक्षों के बीच समझौते के आधार पर फिर से गिनती का आदेश दिया।इस तरह के समझौते पर *विचार करते समय, उनके नेतृत्व द्वारा यह अभिनिर्धारित किया गया था कि (जोर दिया गया) "यह समझौता, हम जोड़ सकते हैं, लोक प्रतिनिधित्व* अधिनियम, 1951 के किसी भी प्रावधान का उल्लंघन नहीं करता है, जिसमें इसकी धारा 97 भी शामिल है।"

(29) ऊपर निर्दिष्ट माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा प्रतिपादित कानून को ध्यान में रखते हुए, हमारा विचार है कि मतों की पुनः गिनती के लिए सहमति देने वाले पक्ष को इस आधार पर उस आदेश की शुद्धता को चुनौती देने से रोक दिया जाएगा कि सहमति आदेश कानून में या अन्यथा अस्वीकार्य है।धारा 4 (बी) के सीमित दायरे को ध्यान में रखते हुए इस तरह के सहमति आदेश की वैधता शायद ही हमले के लिए खुली होगी और विशेष रूप से जब ऐसा

आदेश अन्यथा मामले के गुण-दोष पर न्यायालय द्वारा पारित किया जा सकता है।अन्यथा सक्षम क्षेत्राधिकार की अदालत में निहित शक्ति का प्रयोग हमेशा पक्षों की सहमति पर किया जा सकता है, जब तक कि अदालत के पास अनुरोध की गई राहत को अस्वीकार करने का कोई वैध कारण *न हो।राधा* किशन के मामले में, हम याचिकाकर्ता को आदेश पर हमला करने की अनुमति नहीं देंगे क्योंकि वह इसके लिए सहमत हो गए थे और इस तरह की जांच और गणना के लिए उनके द्वारा एक निश्चित सहमति दी गई थी।विवादित आदेश वैध मतों की इस तरह की फिर से गिनती के कुछ नहीं बल्कि परिणाम हैं।

(30) जैसा कि हम पहले ही देख चुके हैं, पक्षकारों के लिए विद्वान वकील द्वारा अधिनियम की धारा 4 (बी) में उपयोग की गई अभिव्यक्ति 'होगी' पर बहुत जोर दिया गया था। यह कानून की व्याख्या का तय नियम है कि अभिव्यक्ति को पढ़ा और समझा जाना चाहिए जैसा कि विधायिका द्वारा उपयोग किया जाता है।कानून में शब्दों का जोड़, घटाव और प्रतिस्थापन सामान्य नियम नहीं है, बल्कि एक अपवाद है।'शॉल' शब्द का उपयोग आम तौर पर इंगित करता है कि प्रावधान अनिवार्य है।इस धारणा का खंडन करने के लिए, यह स्पष्ट रूप से दिखाया जाना चाहिए कि अधिनियम का उद्देश्य और दायरा और उससे बहने वाले परिणाम उपयोग की गई अभिव्यक्ति के लिए एक अलग अर्थ की मांग करते हैं।इस प्रकार प्रत्येक मामले के तथ्यों पर निर्णय लिया जाना चाहिए कि क्या अभिव्यक्ति 'होगी' को अनिवार्य या निर्देशिका के रूप में समझा जा सकता है।इस अधिनियम की विभिन्न धाराओं और नियमों ने 'होगा' शब्द का समान रूप से उपयोग नहीं किया है और विधायिका ने अपने विवेक से अधिनियम की धारा 176 की विभिन्न उप-धाराओं में भी अलग-अलग शब्दों का उपयोग किया है।धारा की उप-धारा 3 में 'होगा' अभिव्यक्ति

176 अधिनियम की धारा निश्चित रूप से विधायिका के एक अनिवार्य निर्देश को इंगित करती है कि मामलों की सुनवाई उसी न्यायालय द्वारा की जाए।याचिकाकर्ता की ओर से यह तर्क दिया जाता है कि 'होगा' अभिव्यक्ति का अर्थ 'हो सकता है' के रूप में लगाया जाना चाहिए, जबकि प्रतिवादीगण के अनुसार 'होगा' अनिवार्य है और इसे 'होगा' के रूप में पढ़ा जाना चाहिए।

(31) अधिनियम की योजना और उसके उद्देश्य पर विचार करने के बाद, हम 'विल' शब्द को 'मे' या 'मस्ट' के रूप में पढ़ने की कोई आवश्यकता नहीं देखते हैं, ये कानून की तीन अलग-अलग अभिव्यक्तियाँ हैं जिनके अलग-अलग अर्थ और अर्थ हैं।हम इस अधिनियम का ऐसा कोई प्रावधान नहीं ढूंढ पा रहे हैं जो हमें 'होगा' अभिव्यक्ति की व्याख्या के लिए वर्तमान मामले के तथ्यों पर खंडन अवधारणा लेने के लिए राजी करे।'होगा' को 'आवश्यक' के रूप में समझने के लिए हम पाते हैं कि न्यायालय को वैध और प्रशंसनीय कारणों से अपने न्यायिक विवेक का प्रयोग करना होगा।न्यायिक विवेक की नींव इसका कारण है।न्यायिक आदेश के लिए कारण और अभिलेख अभिन्न और अपरिहार्य तत्व हैं।न्यायालय को विधायिका के आदेश द्वारा एक विशेष आदेश पारित करने का निर्देश दिया जाना चाहिए।यह कानून के बुनियादी शासन और जनहित के खिलाफ होगा।इस प्रकार, 'विल' को इसकी साधारण भाषा में इसकी सामान्य सीमा के साथ समझना होगा।विवेक और तर्क का प्रयोग चीजों को प्रकाश में लाता है और उन्हें स्पष्ट करता है ताकि पीड़ित पक्ष को उक्त आदेश को निष्पक्ष रूप से अस्वीकार करने का अवसर प्रदान किया जा सके।

(32) आम तौर पर, 'होगा' अभिव्यक्ति एक दायित्व को लागू करने के निष्कर्ष की ओर ले जाती है, जबकि न्यायालय को सबसे बड़ी विवेकाधीन शक्तियां प्रदान की गई थीं, लेकिन यह निर्णायक कारक नहीं *है।कर्तार सिंह* बनाम *पंजाब राज्य (4)* के मामले में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नलिखित सिद्धांतों को प्रतिपादित किया।

"124. हालांकि आम तौर पर एक अधिनियम का सादा सामान्य व्याकरणिक अर्थ सबसे अच्छा मार्गदर्शक प्रदान करता है और एक क़ानून की व्याख्या करने का उद्देश्य इसे लागू करने वाली विधायिका के इरादे का पता लगाना है, अर्थ निकालने के अन्य तरीकों का सहारा लिया जा सकता है यदि भाषा विरोधाभासी, अस्पष्ट है या वास्तव में बेतुके परिणामों की ओर ले जाती है ताकि वास्तविक अर्थ और अर्थ को बनाए रखा जा सके।देखें (1) सैल्मंडः"न्यायशास्त्र ", 11वां संस्करण, पी. *152;* (2) दक्षिण एशिया इंडस्ट्रीज (प्रा.) लिमिटेड वी.एस. सरूप सिंह ए. आई. आर. *1966* एस. सी. 346,348 और (3) एस. नारायणस्वामी, बनाम।जी. पन्नीरसेल्वम ए. आई. आर 1972 एस. सी. 2284,पी. 2285.

125. प्रवर्तन निदेशालय बनाम दीपक महाजन और ए. *एन.* आर. में हाल के एक निर्णय में। 1994 (1) जे. टी. 290 पी.302 इस न्यायालय की एक पीठ जिसके लिए हम में से एक (एस. रत्नवेल पांडियन,जे) एक पक्ष ने माना है कि "अदालतों के लिए यह अस्वीकार्य है

कार्यात्मक दृष्टिकोण और विधायी इरादे पर गौर करना और कभी-कभी शब्दों और अधिनियमन के पीछे जाना और विधायी इरादे और अधिनियम के उद्देश्य और भावना को प्रभावी बनाने के लिए अन्य कारकों को ध्यान में रखना भी आवश्यक हो सकता है ताकि कोई बेतुका या व्यावहारिक, असुविधा न हो।

(33) न्यायालय का अस्तित्व ही वैधानिक और तय किए गए सिद्धांत द्वारा निर्देशित न्यायिक विवेकाधिकार की एक सीमा का परिचय देता है और हम 'विल' शब्द का अर्थ क़ानून में इसके सादे पढ़ने के अर्थ से अलग करने के लिए कोई बाध्यकारी कारण नहीं देख पा रहे हैं।इन प्रावधानों के पीछे विधायिका का इरादा इस बात पर अधिक जोर देता प्रतीत होता है कि न्यायालय इस तरह के आवेदनों से जल्दी और प्रभावी ढंग से और एक अलग तरीके से निपटना चाहता है, जबकि वह एक उम्मीदवार के खिलाफ की गई भ्रष्ट प्रथाओं को शामिल करने वाली चुनाव याचिका से निपटता है, यानी विस्तृत और पूर्ण जांच करने के बाद।कुछ हद तक न्यायालय अधिनियम की धारा 4 (बी) के तहत एक आवेदन/आपत्ति पर अधिक उदारता से और उसके समर्थन में पूर्ण मौखिक और दस्तावेजी साक्ष्य पर जोर दिए बिना विचार करने के लिए बाध्य है।लेकिन साथ ही, एक औपचारिक आवेदन की प्रस्तुति पर न्यायिक विवेकाधिकार के स्वचालित प्रयोग की अवधारणा को भी प्रावधानों और अधिनियम की योजना के संचयी अध्ययन पर नहीं कहा जाता है। इस अधिनियम के तहत चुनाव से संबंधित मामलों को दो अलग-अलग श्रेणियों के तहत विभाजित करने का विधायिका का इरादा धारा की भाषा से स्पष्ट रूप से स्पष्ट है।वह व्यक्ति जो इस तरह की याचिका, इसे प्रस्तुत करने की विधि, इसकी जांच के लिए प्रक्रिया, जो अंतिम आदेश में समाप्त हो सकती है और उसके परिणाम अलग और अलग हैं।वे एक दूसरे के साथ संघर्ष नहीं करते हैं।वे दो अलग-अलग क्षेत्रों में और दो अलग-अलग आधारों पर अलग-अलग परिणामों के साथ काम करते हैं।

(34) इस स्तर पर, हमारे लिए इन प्रावधानों की व्याख्या पर माननीय खंड पीठों की संबंधित चर्चा के लिए विज्ञापन देना उचित होगा।

(35) भरत सिंह (उपरोक्त) के मामले में इस अदालत की एक *खंड पीठ* ने इस तथ्य पर बहुत अधिक भरोसा व्यक्त किया कि इस अधिनियम के तहत बनाए गए नियम लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम के तहत बनाए गए प्रावधानों और नियमों के लिए सर्वोपरि थे और कहा कि अधिनियम की धारा 176 (4) की भाषा यह सुझाव नहीं देती है कि वोटों की फिर से गिनती का आदेश निश्चित रूप से दिया जाना चाहिए।

(36) दूसरी ओर, सुनेहरी देवी (सुप्रा) के मामले में खंडपीठ ने जोर देकर कहा था कि अभिव्यक्ति 'शैल' का अर्थ 'मे' के रूप में नहीं किया जा सकता। बल्कि "शैल" को पुनर्गणना निर्देशित करने के लिए एक अनिवार्य दायित्व के रूप में समझा जाना चाहिए। पीठ ने कहा कि अन्यथा संबंधित न्यायालय को प्रत्यक्ष जांच और पुनर्गणना के संबंध में स्पष्ट रूप से अबाधित विवेक दिया जाएगा। अदालत ने वोटों की पुनर्गणना का निर्देश देने वाले विद्वान अधीनस्थ न्यायाधीश द्वारा पारित आदेश को बरकरार रखा।

(37) श्री सुरजेवाला ने तर्क दिया कि केवल पूछने पर पुनः गिनती अधिनियम के उद्देश्यों को विफल कर देगी और मतपत्र की गोपनीयता और चुनाव से संबंधित कानून में एक मान्यता प्राप्त अवधारणा से जुड़े महत्व को भी कम कर देगी।इस उद्देश्य के लिए, *उन्होंने राम सेवक* यादव *बनाम हुसैन कामिल किदवई और अन्य (5) चंदा सिंह बनाम चौधरी शिवराम* वर्मा *और* अन्य *(6) भाबी बनाम शिव* गोविंद *और अन्य,* (7) *पी. के. के. शम्सुद्दीन बनाम* के. ए. *एम. मप्पिल्लई मोहिंदीन* और *अन्य (8) और श्री सत्यनाराय* दुधानी बनाम उदय कुमार सिंह और अन्य (9) *पर भरोसा* किया।

(38) कानून की सुस्थापित और स्थिर स्थिति के बारे में कोई संदेह नहीं हो सकता है कि मतपत्र की गोपनीयता बनाए रखी जानी चाहिए और मतों की फिर से गिनती का आदेश हल्के में या केवल पूछने पर नहीं दिया जा सकता है।पक्षकारों द्वारा जिस निर्णय पर भरोसा किया गया वह मुख्य रूप से प्रावधानों से संबंधित हैःलोक प्रतिनिधित्व अधिनियम और उसमें बनाए गए नियम।एक निष्पक्ष प्रक्रिया और चुनाव को स्वतंत्र और निष्पक्ष तरीके से होना चाहिए ताकि एक पवित्र प्रक्रिया की सुरक्षा प्राप्त की जा सके जिसमें आम तौर पर न्यायालय द्वारा हस्तक्षेप नहीं किया जाएगा।हम पहले ही यह मान चुके हैं कि अदालतों से न तो अपेक्षा की जाती है और न ही केवल एक आवेदक से पूछने पर यांत्रिक तरीके से आदेश पारित करने की आवश्यकता होती *है।न्यायालय को* स्वयं को संतुष्ट करना होगा कि एक प्रथम दृष्टया मामला मौजूद है और एक हलफनामे (नियम के अनुसार) द्वारा समर्थित आवश्यक अभिकथन और कुछ दस्तावेजों को इसके समर्थन में रिकॉर्ड पर रखा गया है जो अधिनियम की धारा 176 (4) के तहत न्यायालय की शक्तियों को लागू करने को उचित ठहराएंगे। नियमों के अनुसार एक शपथ पत्र द्वारा समर्थित *निश्चित कथन* और अधिमानतः इसके समर्थन में कुछ संदेह चुनाव याचिका पर विचार करते हुए अदालत द्वारा वोटों की जांच और

गणना/फिर से गिनती के लिए एक आदेश पारित करने के लिए अनिवार्य होंगे।

आई.

(39) हमारे समक्ष यह स्वीकार किया गया है कि हरियाणा अधिनियम की धारा 176 (4) की भाषा को अपनाने का कोई प्रावधान लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम या उसके तहत बनाए गए नियमों के प्रावधानों में मौजूद नहीं है।यद्यपि अधिनियम के कुछ प्रावधानों के संबंध में

(5) ए. आई. आई.आर. 1964 एस. सी. 1249
(6) ए. आई. आर. 1975 एस. सी. 403
(7) ए. आई. आर. 1975 एस. सी. 2117
(8) ए. आई. आर. 1989 एस. सी. 640
(9) ए. आई. आर. 1993 एस. सी. 367

चुनाव प्रक्रिया को पूरा करने के लिए गणना/पुनः गणना और अन्य कदमों का पालन करना कुछ लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम के प्रावधानों के समान है। हरियाणा अधिनियम के तहत, नियम 69 मतों की फिर से गिनती से संबंधित है।जहां विधायी उद्देश्य निर्वाचन अधिकारी द्वारा घोषित परिणाम को अंतिम रूप देना प्रतीत होता है, वहां न्यायालय इस तथ्य को नजरअंदाज नहीं कर सकता है कि विधायिका ने अपने विवेक से हरियाणा अधिनियम के 176 (4) (बी) जैसे प्रावधानों को शामिल किया है। लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम जैसे अन्य क़ानून में समान प्रावधानों की अनुपस्थिति हरियाणा अधिनियम की धारा 176 (4) (बी) के प्रावधानों के दायित्व के महत्व को दर्शाती है। प्यूपोज को निश्चित शक्ति निहित करनी होती है।निर्वाचन याचिका में अधिनियम की धारा 176 (4) (बी) के तहत आने वाले और भ्रष्ट प्रथाओं से संबंधित मामलों से शीघ्रता से निपटने और ऐसे आदेश को अंतिमता प्रदान करने के लिए न्यायालय में।हरियाणा अधिनियम की धारा 183 जो मतों की गोपनीयता बनाए रखने से संबंधित है और प्रत्येक अधिकारी, अधिकारी, एजेंट या अन्य व्यक्ति पर दायित्व को इंगित करती है जो मतों की रिकॉर्डिंग या गिनती के संबंध में कोई कर्तव्य निभाता है और मतदान की गोपनीयता बनाए रखने में सहायता करेगा और उसके द्वारा प्राप्त जानकारी को संप्रेषित नहीं करेगा।हरियाणा नियमों की धारा 66 और 69 के संयोजन में पठित धारा 183 के प्रावधान मुख्य रूप से चुनाव प्रक्रिया के लिए गोपनीयता और सम्मान बनाए रखने के लिए हैं।लेकिन विधायिका द्वारा स्वयं न्यायालय को दी गई एक ठोस शक्ति को इन लागू सिद्धांतों द्वारा कम नहीं किया जा सकता है।यदि विधायिका ने 176 (4) (बी) में सन्निहित किसी विशिष्ट प्रावधान को शामिल करने का विकल्प चुना है, तो इसका यह अर्थ लगाया जाना चाहिए कि विधायिका अधिनियम की धारा 176 (4) (ए) के तहत प्रतिपादित विस्तृत जांच या साक्ष्य में प्रवेश किए बिना धारा 4 (बी) के तहत आपत्ति पर तेजी से निर्णय लेने के लिए अदालत को व्यापक शक्तियां देना चाहती है। इसलिए, अधिनियम की धारा 176 (4) (बी) के प्रावधानों के उदार अनुमोदन की आवश्यकता है, हालांकि उस प्रावधान के तहत आने वाले सीमित मामलों के लिए और जैसा कि इस न्यायालय की पूर्ण पीठ द्वारा श्रीमती के *मामले में* अभिनिर्धारित किया गया है। अंजू (ऊपर)।

(40) माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने *सिविल प्रक्रिया* संहिता के आदेश 11 के प्रावधानों के तहत वैध दस्तावेजों की खोज और निरीक्षण के लिए एक निर्देश के दायरे पर विचार करते हुए और लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 के प्रासंगिक नियमों की जांच करते हुए कहाः—

(7)निरीक्षण के लिए आदेश निश्चित रूप से नहीं दिया जा सकता हैःमतपत्रों की गोपनीयता पर आग्रह को ध्यान में रखते हुए, न्यायालय निरीक्षण के लिए आदेश देने में उचित होगा बशर्ते दो शर्तें पूरी होंः

(ii)न्यायाधिकरण प्रथम दृष्टया *संतुष्ट है* कि विवाद का निर्णय लेने और पक्षों के बीच पूर्ण न्याय करने के लिए मतपत्रों का निरीक्षण आवश्यक है।

लेकिन मतपत्रों के निरीक्षण का आदेश याचिका में की गई अस्पष्ट दलीलों का समर्थन करने के लिए नहीं दिया जा सकता है जो भौतिक तथ्यों द्वारा समर्थित नहीं हैं या ऐसी दलीलों का समर्थन करने के लिए सबूत नहीं हैं।याचिकाकर्ता के मामले को भौतिक तथ्यों के कथन द्वारा समर्थित सटीकता के साथ निर्धारित किया जाना चाहिए।इस प्रकार अनुरोध किए गए मामले को स्थापित करने के लिए निस्संदेह, यदि न्याय के हितों की आवश्यकता हो, तो निरीक्षण के लिए एक आदेश दिया जा सकता है।"

(41) पुनः पी. के. के. *शम्सुद्दीन (उपरोक्त)* के मामले में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नानुसार अभिनिर्धारित कियाः—

"13. इस प्रकार कानून की स्थिर स्थिति यह है कि मतपत्रों की जांच और मतों की फिर से गिनती के आदेश

का औचित्य पीछे से और मतों की फिर से गिनती के परिणाम से नहीं लिया जाना चाहिए।इसके विपरीत, मतों की पुनः गिनती के आदेश के लिए औचित्य एक चुनाव याचिकाकर्ता द्वारा सीमा पर रखी गई सामग्री द्वारा प्रदान किया जाना चाहिए, इससे पहले कि वास्तव में मतों की पुनः गिनती का आदेश दिया जाए।"

(42) भाबी के मामले में (ऊपर) एक चुनाव याचिका में मतपत्र के निरीक्षण का निर्देश देने से पहले माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नलिखित शर्तों को स्पष्ट किया जिन्हें इस तरह के आदेश को पारित करने से पहले निर्दिष्ट करने की आवश्यकता है।

"(1) कि मतपत्र की गोपनीयता बनाए रखना महत्वपूर्ण है जो पवित्र है और जिसका उल्लंघन नहीं होने दिया जाना चाहिए / तुच्छ, अस्पष्ट और अनिश्चितकालीन आरोपों पर;

(2) कि निरीक्षण की अनुमति देने से पहले, निर्वाचित उम्मीदवार के खिलाफ लगाए गए आरोप स्पष्ट और विशिष्ट होने चाहिए और भौतिक तथ्यों के पर्याप्त बयानों द्वारा समर्थित होने चाहिए;

(3) अदालत को पुनः गिनती *के लिए* लगाए गए आरोपों की सच्चाई के संबंध में अदालत के समक्ष पेश की गई सामग्री पर प्रथम दृष्टया संतुष्ट होना चाहिए।

(4) -कि न्यायालय को इस निष्कर्ष पर पहुंचना चाहिए कि) निरीक्षण के लिए अनुरोध करने के लिए पक्षों के बीच पूर्ण न्याय करना आवश्यक और अनिवार्य है;

(5) कि न्यायालय को दिए गए विवेकाधिकार का उपयोग इस तरह से नहीं किया जाना चाहिए ताकि आवेदक चुनाव को अमान्य घोषित करने के लिए मछली सामग्री की दृष्टि से घूमती हुई जांच में शामिल हो सके; और

(6) कि दिए गए मामले के विशेष तथ्यों पर नमूना निरीक्षण का आदेश दिया जा सकता है कि अदालत को पुनः *गिनती*के *लिए* लगाए गए आरोपों की सच्चाई के बारे में प्रथम दृष्टया संतुष्टि के लिए और आश्वासन दिया जाए, न कि सामग्री को बाहर निकालने के उद्देश्य से।

यदि ये सभी परिस्थितियाँ न्यायाधीश के दिमाग में आती हैं और वह संतुष्ट होता है कि इन शर्तों को किसी दिए गए मामले में पूरा किया जाता है, तो विवेकाधिकार का प्रयोग निस्संदेह उचित होगा।AIR 1964 SC 1249; AIR 1966 SC 773; AIR 1970 SC 276; AIR *1973* SC 215; AIR 1972 SC 1251; AIR 1975 SC 693; AIR 1975 SC 283; AIR 1975 SC 403 और AIR 1975 SC 502 संदर्भ।

(43) उपरोक्त टिप्पणियों को लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 के तहत आने वाले मामलों में आई. एच. ओ. एन. बी. ए. अदालत में दर्ज नहीं किया गया था।मान लीजिए कि हरियाणा अधिनियम की धारा 176 (4) (बी) के समान प्रावधान उस क़ानून में सन्निहित नहीं हैं।नियम 69 निर्वाचन अधिकारी के समक्ष पुनर्मतगणना के तरीके को नियंत्रित करता है और इसका शायद ही कोई परिणाम होता है और अधिनियम की धारा 176 की धारा 4 (बी) के तहत याचिका या उपबंध पर विचार करते समय अदालत की प्रक्रिया या शक्तियों से संबंधित नहीं है। न्यायालय को एक ऐसा दृष्टिकोण अपनाना चाहिए जो इस तरह के अधिनियम के उद्देश्य को विफल करने वाले दृष्टिकोण के बजाय क़ानून के कारण और उद्देश्य को आगे बढ़ाएगा।अधिनियम की धारा (बी) के संकीर्ण दायरे में आने वाले सीमित मामलों के लिए न्यायालय को कानून के अनुसार एक आदेश पारित करने की आवश्यकता होगी, जिसमें न्यायालय को प्रस्तुत एक याचिका, नियमों के तहत आवश्यक वास्तविक तथ्यों के आधार पर सत्यापित या शपथ पत्र के साथ संलग्न निश्चित कथनों और उनके समर्थन में दस्तावेजों, यदि कोई हो, के साथ प्रदान की जाएगी।'होगा' अभिव्यक्ति को उसके तार्किक अंत और अर्थ पर ले जाया जाना चाहिए।विधायिका ने निश्चित रूप से इस तरह के अनुबंध के मनोरंजक और त्वरित निपटान की आवश्यकता पर जोर दिया है क्योंकि वे जल्द से जल्द संभव स्तर पर अच्छी सामग्री पर आधारित होने पर विवाद को हल करने में मदद करेंगे और वैध और सही तरीके से चुने गए उम्मीदवार को कानून के तहत निर्धारित पूर्ण कार्यकाल का आनंद लेने में मदद करेंगे।हम ऊपर उल्लिखित इस न्यायालय की खंड पीठों के दो निर्णयों के बीच के रास्ते पर चलना चाहेंगे।अदालत को ऊपर वर्णित किसी भी सामग्री के अभाव में केवल आवेदक द्वारा पूछे जाने पर मतों की फिर से गिनती, जांच और गणना का आदेश पारित करने के लिए बाध्य नहीं किया जाएगा।दूसरी ओर,

न्यायालय को इस तरह का आदेश पारित करने से पहले विस्तृत मौखिक और दस्तावेजी साक्ष्य के आधार पर विस्तृत जांच में जाने की आवश्यकता नहीं है।हम पहले ही देख चुके हैं कि इस खंड का दायरा बहुत सीमित है और

इस तरह के आवेदन पर जो राहत अंततः दी जा सकती है, वह केवल उम्मीदवारों के पक्ष में वैध मतों की जांच और गणना के उद्देश्य से फिर से गिनती की जा सकती है और इस धारा की अधिकारिता को अदालत द्वारा यह अभिनिर्धारित करके नहीं बढ़ाया जा सकता है कि इस सीमित प्रावधान के तहत राहत देने के लिए अदालत द्वारा एक नियमित जांच की जानी है।इस तरह के प्रस्तुतिकरण की स्वीकृति शायद कानून के उद्देश्य को विफल कर देगी।

(44) हम पहले ही निर्णय ले चुके हैं कि राधा किशन के मामले में उन्हें विवादित आदेश की शुद्धता को चुनौती देने से हटा दिया जाएगा क्योंकि इस अदालत के रिकॉर्ड में पक्षकारों की सहमति के आधार पर विवादित आदेश में हस्तक्षेप करने का कोई कारण नहीं लाया गया है जो अन्यथा अनुमेय और कानूनी था।यह आदेश अधिनियम की धारा 176 (4) (बी) के दायरे में आता है और इस प्रकार आपत्तियों को खारिज किया जाना चाहिए।

(45) सुइजानी के मामले में, हमने हरियाणा अधिनियम की धारा 176 के तहत दायर मूल याचिका की जांच की है। वैध मतों के समावेश और बहिष्कार के संबंध में निश्चित उदाहरणों के साथ विभिन्न कथन किए गए थे।अनुमान परिणाम में परिवर्तन के संबंध में किए गए थे।याचिकाकर्ता के अनुसार परिणाम 5 दिसंबर, 1994 को घोषित किया गया था और याचिकाकर्ता को तीन मतों से विजेता घोषित किया गया था।लेकिन अगली ही तारीख को यह अनुमान लगाया गया कि प्रतिवादी नंबर 1 को दो मतों के अंतर से सफल घोषित किया गया था।

(46) याचिका में विस्तृत परिस्थितियाँ बताई गई थीं और याचिका का विधिवत सत्यापन किया गया था।याचिकाकर्ता श्रीमती. 18 मई, 1996 को दर्शना ने भ्रष्ट प्रथाओं या अन्य सभी आधारों को छोड़ दिया था और अपनी राहत को सीमित कर दिया था और वैध मतों की पुनः गिनती और जांच और गणना तक दावा किया *था।विद्वत*न्यायाधीश 14 अगस्त, 1996 के आदेश के माध्यम से इस निष्कर्ष पर पहुंचे थे कि पक्षों के बीच न्याय करने के लिए और दस्तावेजों द्वारा समर्थित याचिका में किए गए कथनों के आधार पर, वैध मतों की पुनः गिनती/जांच और गणना का निर्देश देना अनिवार्य होगा।14 अगस्त, 1996 का आदेश एक सुविचारित आदेश है और हमारा विचार है कि यह अधिनियम की धारा 176 (4) (बी) के आधार और अंतर्निहित आवश्यकताओं को पूरी तरह से पूरा करता है।

(47) नतीजतन, हम श्रीमती द्वारा चुनौती दिए गए 14 अगस्त, 1996 के आदेश में हस्तक्षेप करने का कोई कारण नहीं देखते हैं। सुइजानी।

(48) उपरोक्त चर्चा का संचयी प्रभाव हमें अधिनियम की धारा 176 (4) (बी) की प्रकृति और दायरे के संबंध में कानूनी विवाद को निम्नलिखित रूप में निपटाने के लिए प्रेरित करता हैः—

(49) ऊपर अभिलिखित कारणों के संबंध में, हम सुनेहरी देवी बनाम नारायण देवी, 1995 की सी. डब्ल्यू. पी. संख्या 6381,20 अक्टूबर, 1995 को निर्णय किए गए और भारत सिंह बनाम दलीप सिंह और अन्य *सी. डब्ल्यू.* पी. *संख्या 9671,1995* के मामलों में इस न्यायालय की माननीय खंड पीठों द्वारा लिए *गए चरम* विचारों *में से किसी से* भी सहमत नहीं हैं।हम मध्य मार्ग और व्यावहारिक उन्मुख दृष्टिकोण अपनाना पसंद करेंगे ताकि अधिनियम के उद्देश्य को प्राप्त किया जा सके। इस तरह के चुनाव में बार-बार मतों की फिर से गिनती और जांच की जाती है।भ्रष्ट प्रथाओं या अन्य आरोपों के इस तरह के अनुरोध प्रथम दृष्टया अधिनियम की धारा 176 (4) (बी) के *दायरे में* एक आदेश पारित करने को उचित ठहरा सकते हैं। इन प्रावधानों की भाषा में एक याचिका के व्ययकारी निपटान और विस्तृत जांच के बिना जांच और गणना के आदेश को पारित करने की आवश्यकता वाली विधायी मंशा स्पष्ट है।धारा की भाषा पर अनावश्यक जोर दिए बिना और उन मामलों में उत्पन्न होने वाली स्थितियों के लिए कानून को अतिसंवेदनशील बनाने के लिए जिनके लिए सूफीह प्रावधान लागू होते हैं और भ्रम की संभावना को दूर करने के इरादे से हम धारा को उसके संचयी पठन और अधिनियम की योजना के साथ संश्लेषण में व्याख्या करेंगे।

(50) हमारा मानना है कि इस तरह के चुनाव में वोटों की फिर से गिनती केवल पूछने और नियमित तरीके से नहीं की जा सकती है।यदि आवेदक, कानून के अनुसार, दस्तावेजों द्वारा समर्थित, यदि कोई हो, स्पष्ट विवरणों द्वारा

समर्थित सत्यापन पर निश्चित कथन करता है और जहां आवेदक अदालत की संतुष्टि के लिए प्रथम दृष्टया मामला बनाता है, तो अधिनियम की धारा 176 (4) (बी) के सीमित दायरे में आने वाले मामले में अदालत को फिर से गिनती पर वोटों की जांच और गणना का आदेश देने से कुछ भी नहीं रोकता है। दूसरे शब्दों में, अदालत इस तरह की राहत को इस कारण से अस्वीकार करना उचित नहीं होगा कि आवेदक को, उपरोक्त के बावजूद, विस्तृत जांच के माध्यम से साक्ष्य का नेतृत्व करना चाहिए।इस तरह की विस्तृत जांच न तो पूर्वनिर्धारित है और न ही पूर्व-निर्दिष्ट सीमित मामलों में उक्त प्रावधानों के दायरे में आवश्यक होगी।

(51) परिणामस्वरूप दोनों रिट याचिकाओं को लागत के संबंध में बिना किसी आदेश के खारिज कर दिया जाता है।

आरएनआर

अस्वीकरण : स्थानीय भाषा में अनुवादित निर्णय याचिकाकर्ता के सीमित उपयोग के लिए है ताकि वह अपनी भाषा में इसे समझ सके और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है । सभी व्यवहारिक और आधिकारिक उदेश्यों के लिए निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रमाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य के लिए उपयुक्त रहेगा ।

वरुण बंसल,

प्रशिक्षु न्यायिक अधिकारी,

गुरूग्राम, हरियाणा